International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol.9 No.6 July – Aug 2022

रागों में रस अभिव्यंजना

डॉ. अनुपमा सक्सेना
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा संगीत विभागए डी. ए. वी. (पी.जी.) कॉलेज देहरादून।
Corresponding Author- **डॉ. अनुपमा सक्सेना**
Email- anupmasaxena77@gmail.com
DOI- 10.5281/zenodo.7070960

सारांश -

राग भारतीय शास्त्रीय संगीत की आत्मा हैं जिसका उल्लेख हमें प्राचीन ग्रंथों से प्राप्त होता है। भारतीय संगीत में रागों का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान है। रागों के आधार पर ही शास्त्रीय संगीत को स्थिर रूप प्राप्त है। राग संगीत कला के द्वारा भाव प्रदर्शन करने का सशक्त माध्यम है। जिसमें स्वर, भाषा, भाव लय की कल्पनानुसार अभिव्यक्ति एवं रसानुभूति कलाकार की कुशलता इन सभी का समावेश हमें दृष्टिगोचर होता है। सर्वप्रथम हमें यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि संगीत क्या है? राग क्या है? रस क्या है? अतः इन सबका आपस में क्या सम्बन्ध है यहाँ हम विस्तार से चर्चा करते हैं।

मुख्य स्वर : राग, संगीत, स्वर, लय, रस, भाव

प्रस्तावना -

संगीत मानव जीवन में घुली-मिली एक अत्यन्त महत्वपूर्ण और उपयोगी कला है। संगीत प्रकृति के कण-कण में व्याप्त है। जीवन के सुख दुख में पिरोया हुआ ताना-बाना है जो प्राणी के अंदर तक अभिभूत होता है। संगीत के बिना जीवन का हर कोना सूना लगता है। संगीत हमारे जीवन की निराशा को दूर करके एक ऐसी अभिनव पृष्ठभूमि का निर्माण करता है जिसमें उत्साह है, संजीवनी है और अपार आनन्द है। शास्त्रीय संगीत स्वर, लय और भावों का सुमधुर मिश्रण है जिसके द्वारा सौन्दर्य और आनन्द की अनुभूति होती है। श्री भातखंडे जी के मतानुसार रागों में रस की उत्पत्ति मनः स्थिति के अनुरूप होती है। अतः यह एक भाव प्रधान कला है, जिसके माध्यम से मन के अनेक जाने हुए व न जाने हेतु भाव अभिव्यक्त होते हैं और व्यक्तित्व को उन कुंठाओं से मुक्ति दिलाते हैं जिनका पूरी तरह से अध्ययन व उपचार मनोविज्ञान भी अभी तक नहीं कर पाया है।[1]

शास्त्रीय संगीत में श्रृंगार, रस, करूण रस, वीर रस, एवं शान्त रसों की धाराओं का प्रवाह होता है जिसके द्वारा वह मानव के अर्न्तमन तक पहुँच कर रसानुभूति कराने में सक्षम है। समस्त ललित कलाओं में संगीत का सर्वोपरि स्थान प्राप्त है। संगीत के विषय में शारंगदेवकृत संगीत रत्नाकर ग्रंथ में उद्घृत 'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं मुच्यते' अवशेषों के रूप में प्राप्त होता है। यह तीनों कलायें स्वतंत्र एवं एक दूसरे की पूरक कलायें मानी जाती है। संगीत गुरूमुखी विद्या तो मानी ही गयी है। इसके अतिरिक्त शास्त्र एवं प्रयोगिक परम्परा पक्ष दोनों का समान रूप से स्थान दिया गया है। संगीत का मूल स्रोत वेद है। वैदिक काल में चार वदों की रचनाएं हुई। ऋग्वेद, यजुर्वेद, अर्थववेद एवं सामवेद। सामवेद पूर्ण संगीतमय है। सामवेद से पूर्व केवल तीनों स्वरों का प्रयोग होता था। उदात्त अनुदात्त और स्वरित। आगे चलकर एक एक करके स्वर बढ़ते गये और वैदिक काल में ही सामगान सप्त स्वरों में होने लगा।[2] संगीत स्वरों पर आधारित है। स्वरों के माध्यम से ही संगीत की रचना हुई है। संगीत उतना ही प्राचीन माना गया है, जितना कि मानव। पं० अहोबल ने नवरसों का वर्गीकरण सात स्वरों के अन्तर्गत इस प्रकार किया है - सा-हास्य, रे-शृंगार, ग-हास्य, म-शृंगार, प-भयानक, ध-वीभत्स, नि-करूण[3] विभिन्न स्वरों से थाट निर्मित किये गये। थाट से राग की उत्पत्ति हुई। रागों के स्वरों के माध्यम से तीन वर्ग बनाए गए - कोमल रेध वाले राग, शुद्ध रेध वाले राग, कोमल गनि वाले राग।

1. जिन रागों में रेध स्वर कोमल लगते हैं वे संधि प्रकाश राग कहे जाते हैं। यह दिन और रात की संधिवेला में गाये जाते हैं। इसके अन्तर्गत राग पूर्वी, भैरव, मारवा थाट के सभी राग गाये बजाये जाते हैं जैसे कालिंगड़ा भैरव, जोगिया, ललित, रामकली, श्री आदि।
2. रेध कोमल ग शुद्ध स्वर होने के पश्चात् रेध शुद्ध वाले राग आते हैं। इसके अन्तर्गत विलावल, कल्याण और खमाज थाट के राग आते हैं।
3. जैसे - विलावल, देशकार, भूपाली, गौडसारंग, खमाज, बिहाग, कल्याण, केदार इत्यादि।
4. तीसरे वर्ग में गनि कोमल वाले रागों का समय आता है। इसका समय दिन और रात में 10 से 4 बजे तक रहता है। इस वर्ग के अन्तर्गत चार

चारों के राग आते हैं तोड़ी, आसावरी, भैरवी और काफी।[4]

राग भारतीय संगीत की आत्मा है। भारतीय संगीत के साथ ही समस्त पौर्वात्य संगीत की विशेषता इसी राग व्यवस्था में है जिस तरह पाश्चात्य संगीत 'हारमनी संगीत' के लिए प्रसिद्ध है वही भारतीय संगीत 'मेलाडी संगीत'[5] या राग संगीत के लिए प्रसिद्ध है। इसका क्षेत्र भारत, ईरान, अफगानिस्तान, इजराईल, स्याम, तथा बर्मा जैसे विशाल देशों तक फैला है। राग स्वर देह और भाव देह में समन्वित हैं। "रज्जयतीति राग"[6] अर्थात् जिससे विÜा का रंजन हो, वह राग कहलाता है। राग शब्द का प्रचार में आने से पूर्व प्राचीन काल में 'जाति' शब्द प्रचलित था। राग शब्द की सर्वप्रथम व्याख्या मतंगमुनि ने "बृहद्देशी" ग्रंथ में की है। जो ईसा के पश्चात छठी शताब्दी की रचना है। मतंग के मतानुसार विशिष्ट स्वर वर्णों से विभूषित उस ध्वनि विशेष को राग कहते हैं जो साधारण के मन को रंजित करता है।

"स्वरवर्ण विशेष ध्वनि भेदेन वा पुनः।
रज्यते येन यः कश्चित स रागः संमतः सताम्। (280)

अथवा

योऽसौ ध्वनि विशेषवस्तु स्वरवर्ण विभूषितः
रंजको जनचित्तानां स च रागः उदाहृतः
(281)[7]

परम्परा से यही राग की परिभाषा चली आ रही है। राग शब्द का उद्गम "रज्ज" धातु से है। इस धातु में "घ¥" प्रत्यय जोड़ने से 'राग' संज्ञा-शब्द निर्मित होता है, जिसका अर्थ है "रंग" संगीत में 'राग' हमें अपने रंग में रंग लेता है और यही अलौकिक आनन्द स्थिति है।[8] मतंग के पश्चात् राग का विस्तृत वर्णन हमें नारद द्वारा रचित "संगीत मकरन्द" में प्राप्त होता है। नारद का समय सात से ग्यारह शताब्दी तक माना है परन्तु रागों का पूर्ण विकास शारंगदेव के काल में हुआ[9] राग का महत्वपूर्ण लक्षण रंजकता प्रदान करना है। जिसके द्वारा अपूर्व आनन्द की सृष्टि होती है। राग स्वर और वर्ण की सुन्दर श्रेष्ठ ध्वनि है, जो श्रोता के हृदय में आनन्द की अनुभूति कराता है। कर्णप्रिय सांगीतिक ध्वनियां हमारी आकांक्षाओं की पूर्ति करती है।

राग शब्द का उल्लेख भरत नाट्यशास्त्र में भी मिलता है। रागों का सृजन बाईस श्रुतियों के विभिन्न प्रकार से प्रयोग का, विभिन्न रस या भावों को दर्शाने के लिए किया जाता है। प्राचीन समय में रागों को पुरूष व स्त्री रागों में अर्थात् राग व रागिनियों में विभाजित किया गया था। सिर्फ यही नहीं, कई रागों को पुत्र राग का भी दर्जा प्राप्त था। बाद में आगे चलकर आधुनिक राग वर्गीकरण प्रणाली के अन्तर्गत 'थाट' के जन्मदाता पं० विष्णु नारायण भातखंडे को माना जाता है। भारतखंडे जी ने नवीन स्वरलिपि पद्धति का आविष्कार तो किया ही है साथ ही उÙार भारत में प्रचलित रागों को दस थाटों में विभाजित किया जिनके नाम इस प्रकार से हैं - कल्याण, विलावल, खमाज, भैरव, पूर्वी, मारवा, काफी, आसावरी, भैरवी, तोड़ी। & आज के परिवेश में जो भी गाया बजाया जाता है वह सब राग गायन, वादन ही है। प्राचीन समय में राग से पूर्व जाति गायन होता था। राग का क्रमिक विकास हुआ है। जो आज हमारे समक्ष है। संगीत में रंजकता के लिए ही राग का आविष्कार हुआ। मन मानव जीवन नव रसों से परिपूर्ण है। उन्हीं रसों को मूर्त करने के लिए रागों का जन्म हुआ। सप्त स्वरों में स्वयं वह गुण है जो अलग-अलग रसों का रसास्वादन कराते हैं। भारतीय वाङ्मय में रस प्राचीनतम् शब्दों में से है। साहित्य शास्त्रियों ने रसों की संख्यसा नौ बताई है जो इस प्रकार है - शृंगार, हास्य, करूण, रौद्र, अद्भुत, वीर, भयानक, वीभत्स और शान्त ही बताये हैं। रस के संदर्भ में नाट्य-शास्त्र रचियता भरतमुनि के मतानुसार काव्य और संगीत को रस से परिपूर्ण मानते हैं तथा नाट्यशास्त्र में रस को विशेष रूप से महत्व दिया गया है। रस से संबंधित इस दोहे के माध्यम से इस प्रकार वर्णन किया गया है -

"विभावानुभावव्यभिचारि संयोगाद्रसनिष्पÙिः"[10]

अर्थात् - विभाव अनुभाव तथा संचारी भावों के संयोग से रस निष्पन्न होता है। यही रस सूत्र के रूप में प्रसिद्ध हो गया एवं इसी के आधार पर संपूर्ण रस का इसी रस सूत्र के द्वारा वर्णन हो जाता है। भरत ने भाव दो प्रकार के माने हैं स्थायी भाव, संचारी भाव। भरत ने आठ रस के आठ स्थायी भाव, 33 व्याभिचारी भाव और 8 सात्विक भाव इस प्रकार कुल 49 भावों को वर्णित किया है। आठ स्थायी भाव इस प्रकार हैं - रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा तथा विस्मय। भरत ने संचारी भावों की संख्या 33 बतायी है जो इस प्रकार से हैं - निर्वेद, ग्लानि, शंका, असया, भय, श्रम, आलस्य, दैन्य, चिन्ता, मोह, स्मृति, धृति, व्रीडा, चपलता, हर्ष, आवेग, जड़ता, गर्व, विषाद, औत्सुक्य, निद्रा, अपस्मार, सुप्त, प्रबोध, अमर्ष, अविहत्था, उग्रता, मति, व्याधि, उन्माद, भरण, त्रास, तथा वितर्क।[11]

समस्त ललित कलाओं का भावों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। कोई भी व्यक्ति भाव को बिना किसी माध्यम से दूसरे के सहृदय तक नहीं पहुँच सकता।

ललित कलाओं में संगीत कला का स्थान महत्वपूर्ण माना गया है। जिस प्रकार चित्रकला में कलाकार तूलिका एवं रंगों के माध्यम से अपने भावों को कैनवस पर चित्रित करता है, कवि शब्दों के माध्यम से अपने मनोभावों को अभिव्यक्त करता है। उसी प्रकार संगीतकार स्वर, ताल, लय के माध्यम से और मूर्तिकार पत्थर, मिट्टी के टुकडों के माध्यम से अपने भाव दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाते हैं। जिससे रसानुभूति का संचार होता है। नाट्यशास्त्र में सात रसों

के अतिरिक्त कालान्तर में दो रस जोड़ दिये गये हैं जिन्हें शान्त रस और भक्ति रस कहा गया है। संगीत में मुख्यतः शृंगार, हास्य, वीर, करूण, अद्‌भुत, शान्त, भक्ति इन्हीं सात स्वरों का सर्वाधिक प्रयोग होता है। वीभत्स तथा भयानक रस का प्रयोग अत्यल्प होता है। निम्नोक्त राग-रस तालिका द्वारा इसी बात की पुष्टि होती है।

रस नाम : रस उत्पन्न होने वाले राग
शृंगार रस : काफी, बसन्त, बहार, पीलू, तिलंग
हास्य रस : तिलक कामोद, धानी, गारा
करूण रस : जोगिया, आसावरी, श्री, भैरवी
वीर रस : अड़ाना, हिंड़ोल, कामोद, मालकौंस
रौद्र रस : शंकरा, मालश्री
अद्‌भुत रस : बहार, सरपर्दा, कौंसी कान्हड़ा
शान्त रस : पूरिया, भैरव, पूर्वी, ललित

रागों के माध्यम से ही रसानुभूति संभव है, विभिन्न राग विभिन्न रसों की उत्पत्ति करते हैं। यहां हम कुछ रागों के उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं जैसे -

राग बहार -

राग बहार शृंगार रस का राग है। यह बसन्त ऋतु में गाया जाने वाला राग है। इसकी प्रकृति चंचल है। चपल गति का राग होने के कारण यह शृंगार रस से परिपूर्ण है। इसके गीतों में प्रायः बसन्त ऋतु का वर्णन किया जाता है। इस राग में सा म, नि प की स्वर-संगति अच्छी लगती है। कालिदास द्वारा रचित ऋतुसंहार में राग बहार के सुन्दर रूप का वर्णन किया गया है जो इस प्रकार है -

काशांशुका विकचपद्‌ममनोज्ञवक्त्रा
सोन्मादहंस-रव-नुपूरनादरम्या।
आपक्वशालिरूचिरानतगात्रयष्टिः
प्राप्ता शरन्नववधूरिव रूपरम्या

भावार्थ -

काश पुष्प के रेशमी वस्त्र पहने हुए, विकसित कमल के समान मनोरम मुखवाली, मतवाले हंसों की सुहावनी बोली के नूपुर (बिछुए) पहने हुए, पके हुए धान के सुन्दर एवं नीचे की ओर झुके हुए शरीर धारण किये यह शरद ऋतु नवविवाहिता सुन्दरी वधु के समान आ गई है।[12] इनके ख्यालों में अधिकतर फूल, भँवरा, बगिया, लताएं आदि का वर्णन होता है। इस राग का चलन मध्य और तार सप्तम में होता है। इसका चलन स्वर स्मूह के माध्यम से इस प्रकार है-

स, म म प, ग म ध, नि सां, सां नि प, मप ग म, रे सा। इस स्वर समुदाय द्वारा प्रकृति में चारों और का वातवरण हरियाली का माहौल उत्पन्न कर रहा है। चारों ओर शृंगारिकता का भाव है। अतः शृंगार रस है।

करूण रस से रसानुभूति अभिव्यक्त होने वाला राग

राग भैरवी -

यह करूण रस प्रधान रागों में से एक हैं। इसकी प्रकृति गम्भीर है। इसे सदा सुहागिन राग भी कहते हैं। यह भैरवी थाट का राग है। इस राग के द्वारा कलाकार महफिल का समापन करते हैं। इस राग में ठुमरी, टप्पा, गज़ल, भजन, गीत आदि गाये जाते हैं। सा ग, प, ध इन स्वरों पर राग का सौन्दर्य निहित है। रे ग ध नि स्वर कोमल होने के कारण यह करूण रस की श्रेणी में आता है। यह राग प्रातःकाल के समय गाया जाता है। परन्तु कोई इसे सर्वकालिक राग मानते हैं।

भैरवी का रूप इस प्रकार प्रकट होता है -

सरोवरस्थे स्फटिकस्य मराऽपे सरोरूहैः शंकरमर्चयन्ती।
तालप्रभेदप्रतिपन्नगीता, गौरीतनुनमि हि भैरवीयम्।।

अर्थात् एक सुन्दर तालाब के बीचोंबीच स्फटिक मणि (पत्थर) का मंदिर बना है। ताल में कमल के फूलों को लेकर जो भगवान शंकर की पूजा कर रही हैं। तालों के प्रमेद के द्वारा जिसके गीत सम्पन्न हो रहे हैं वह गौर (पार्वती) समान शरीर वाली (शिव स्वरूपा) भैरवी रागिनी है।१३ राग भैरवी द्वारा स्वर स्मूह से करूण रस की नित्पत्ति इस प्रकार से है -

म ग सा रे सा, ध नि सा नि सा ग म प
ध प प ध नि ध प, प म ग, प म ग सा रे सा।
ग म ध नि सां, रे सां नि सां रें सां नि ध प
प, प घ नि ध प, घ म ग रे ग रे सा।

यह स्वर समुदाय करूण रस के भाव को जागृत करता है। कारण सभी स्वर कोमल है एवं कोमल स्वर करूणा के प्रतीक माने गये हैं। भैरवी द्वारा स्त्री शृंगार, करूणा, दया एवं सौम्यता के भाव उत्पन्न किये जा सकते हैं। भैरवी में शक्ति, करूण, शृंगार रस के गीत अधिक मिलते हैं।

राग भैरवी के छोटे ख्याल में करूण रस का एक उदाहरण प्रस्तुत हैं -

स्थाई - बाबुल मोरा नैहर छूटो जाय।
अन्तरा - चार कहार मिल डुलियाँ मँगावो
अपना बेगाना छूटो जाये
बाबुल मोरा नैहर छूटो जाय।। इसके अतिरिक्त और भी राग भिन्न-भिन्न रसों का निर्माण करते हैं। राग में स्वर रस का निर्माण करते हैं, केवल राग के स्वरों से राग की पूर्ति नहीं होती। इसमें साहित्य का समावेश आवश्यक है। स्वर एवं साहित्य मिलकर ही राग की रसानुभूति कराने के सक्षमहैं।

अध्ययन के उद्‌देश्य -

१. राग एवं रस का ज्ञानपरक आंकलन
२. राग में रस, साहित्य एवं भावों के माध्यम से जानमानस तक पहुंचाना।
३. गायन वादन के परिप्रेक्ष्य में रागों का कलात्मक सौन्दर्य संयोजन

शोध प्रविधि -

पुस्तकों का पठन-पाठन, शोध पत्रों द्वारा ज्ञानवर्धन

निष्कर्ष -

प्रस्तुत शोध पत्र में रागों में रस की अभिव्यंजन किस प्रकार की जाती है। रागों में रसानुभूति किस-किस माध्यम से की जाती है प्रयास किया गया है। भारतीय

शास्त्रीय संगीत राग प्रधान है जिसमें नियमों की बाध्यता होती है। केवल एकमात्र स्वर से रसानुभूति नहीं हो सकती। रागों में स्वरों के साथ शब्द मिलकर रसोत्पत्ति करने में सफल होते हैं। जिस प्रकार किसी एक ही शब्द द्वारा शब्दों की सहायता से विभिन्न रसों की उत्पत्ति की जा सकती है जैसे - 'आओ' इसी शब्द के द्वारा करूण, शृंगार, वीर रसों की सृष्टि हो सकती है, उसी प्रकार एक से एक राग द्वारा विभिन्न रसों की उत्पत्ति हो सकती ळे

जैसे राग मालकौंस वीर रस के अन्तर्गत रखा गया है, परन्तु उसके शब्दों के बदलाव के कारण उसमें वीभत्स, भक्ति, शान्त तथा शृंगार रस उत्पन्न किया जा सकता है। राग से अनेक रसों की उत्पत्ति पदों के ऊपर निर्भर करती है। रागों में रसानुभूति कराने में लय का भी प्रमुख स्थान है। निष्कर्ष रूप में राग में रसोत्पत्ति गायक वादक की प्रस्तुतिकरण पर भी निर्भर करता है कि वो स्वर, पद एवं लय के साथ किस प्रकार से राग को प्रस्तुत करने में सफल होता है। आगे भी हमारा यही प्रयास है कि हम इस विषय को नवीन शोध करके और ज्ञानवर्धक एवं सुन्दर बनायें।

संदर्भ सूची

1-संगीत - 1982 (जुलाई) लेखक - बी०के० माहेश्वरी पृ०-5
2-भारतीय संगीत का इतिहास - राम अवतार वीर (प्रथम भाग) पृ० - 60
3-संगीत पारिजात - पं० अहोबल पृ० - 26
4-राग परिचय (भाग दो) - हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव पृ० - 128
5-भारतीय संगीत एक वैज्ञानिक विश्लेषण - स्वतंत्र शर्मा पृ.० - 63
6-संगीत रत्नाकर (द्वितीयो राग विवेकाध्याय) शारंग देव पृ.० 3
7-बृहद्देशी - मतंगमुनि - श्लोक 280 &281 पृ० 29
8-भारतीय संगीत एक वैज्ञानिक विश्लेषण - प्रो० स्वतंत्र शर्मा पृ० 60
9-संगीत मकरन्द - श्री नारद - पृ.० 14
10-भरत नाट्यशास्त्र (षष्ठोध्याय) भरतमुनि - पं० केदारनाथ पृ० 93
11-नाट्यशास्त्र - भरतमुनि पं० केदारनाथ (सप्तम अध्याय) श्लोक (28&92)
12-ऋतुसंहारम् - कालिदास 3@1 श्लोक
13-संगीत पारिजात - पं. अहोबल पृ० 139